कमला नेहरू महिला महाविद्यालय

हिंदी विभाग ; ई – पत्रिका

हिंदी भारती

नवम्बर - 2017

संपादक मंडली

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्रा

उप – संपादक : कु. प्रियंका प्रियदर्शिनी परिडा

कु. शुभश्री शताब्दी दास

संपादकीय

आपके समक्ष " हिंदी भारती " का नवंबर का अंक प्रस्तुत है । यह अंक कोई विषेशांक ना हो कर सहज भावों की सहज अभिव्यक्ती है । इस अंक में विभाग की छात्राओं की उपलब्धियां भी सगर्व प्रस्तुत है । " हिंदी भारती " कमला नेहरू महिला महाविद्यालय के हिंदी विभाग को अपनी समग्रता के साथ प्रस्तुत करता है । आपने इसके हर अंक को सराहा है एवम् आशा है आगे भी इसी सहृदयता से इसे अपना आशिर्वाद एवम् स्नेह देते रहेंगे ।

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

डॉ. मनोरमा मिश्रा

लक्ष्मी पूजा

यह कहानी नारी स्वाभिमान की कहानी है। जो भगवान लक्ष्मी के माध्यम से कवि बलराम दास जी ने लक्ष्मी पुराण के माध्यम से दर्शाया है। भगवान लक्ष्मी की यह विशेषता है कि जो व्यक्ति उन्हें सच्चे दिल से पुकारता है वह उसकी प्राथर्ना बहुत जल्दी सुन लेती हैं। ऐसी ही एक नारी थी श्रीया चंडालुनी जो निर्धन तथा पुत्रहीन थी। हमेशा दुःखी रहती थी। एक बार नारद मुनि ने उसे दर्शन देकर मार्गशीर्ष महीने के गुरुवार के दिन लक्ष्मी पूजन करने को कहा ताकि उसकी सारी मनोकामना पूरी हो सके। श्रीया एक अछूत स्त्री थी। उसको किसी भी पूजार्चना करने से मना किया गया था। समाज से लड़ कर वह मार्गशीर्ष महीने के गुरुवार के दिन माँ लक्ष्मी का पूजन करती है। लक्ष्मी जी उसकी पूजा से प्रसन्न हुई और उसके घर पधार कर श्रीया की मनोकामना अनुसार वरदान दिया। लेकिन यह बात महाप्रभु जगन्नाथ के बड़े भाई प्रभु बलराम को असहय थी। उन्होंने जगन्नाथ प्रभु से साफ साफ कहा कि लक्ष्मी चंडाल के घर जाकर खुद चंडालुनी हो गयी है। इसलिए वह श्री मन्दिर में प्रवेश नहीं कर सकती, अगर वह श्री मन्दिर में प्रवेश करेगी तो मैं मंदिर छोड़ कर चला जाऊँगा। लक्ष्मी ने बलभद्र के इस कथन को अपना अपमान समझा। फिर महा लक्ष्मी ने श्राप दिया कि उन दोनों भाइयों को बारह वर्ष तक अन्न का एक दान और जल की एक बूंद तक प्राप्त नहीं होगी, तब तक जब तक यह चंडालुनी लक्ष्मी उन्हें खाना न परोसे वे भुखे रहेंगे। ऐसा कहकर माता लक्ष्मी श्रीमंदिर को छोड़ कर चली जातीं हैं। फिर दोनों भाई लक्ष्मी के श्राप को भुगतते रहें। इधर उधर खाने पीने के लिए भटकते रहे पर उन्हें कहीं

भी अन्न जल नहीं मिला। इसी तरह १२ साल बीत गई। एक दिन समुद्र के किनारे दोनों भाई की भटकते हुए एक पण्डे से मुलाकात हुई, वह खाने पीने की बहुत प्रशंसा कर रहा था, इसे सुनकर दोनों भाई खाने के बारे में पूछते हैं, तो पण्डा ने कहा - वहाँ जो भी जाता है खाली पेट खाली हाथ नहीं लौटता है। आप भी वहां जाईए आप भी खाली हाथ नहीं लौटेंगे, कुछ ना कुछ ज़रूर मिलेगा। और दोनों भाई यह बात सुनकर समुद्र के पास जो बड़ा महल था वहां गए। वहां जा कर महल की दासियों से पता चलता है कि वह महल एक चंडालिनी का है। यह बात सुनकर दोनों भाईयों ने कहा कि उन्हें खाना बनाने की सामग्री दे दें, वे खुद खाना बनाएंगे। पर उनसे खाना नहीं बन पाता, वे गुस्से से लकड़ी से चूल्हे को तोड़ देते है। उसके बाद वे दोनों चंडालिनी के महल में खाने के लिए राजी हो गए। फिर दोनों भाई तैयार हो कर खाने के लिए बैठ गए। सारे पकवान उनकी मनपसंद के थे। भोजन करने के बाद जब उनको पोड़ पीठा (ओडिशा का एक विशिष्ट व्यंजन) मिला तब उन दोनों भाईयों को पता चला कि यह महल माँ लक्ष्मी का है। तब प्रभु बलराम के आदेश से महाप्रभु जगन्नाथ जी ने लक्ष्मी माँ से क्षमा मांग कर मंदिर में लौटने का अनुग्रह किया ।

तब माँ लक्ष्मी शर्त रखते हुए कहती है कि - मैं इसी शर्त पर मंदिर प्रवेश करूँगी कि आज से छुआ छूत का भेदभाव मिट जाएगा। अमीर - गरीब, ब्राम्हण - शुद्र सबको पूजा का अधिकार होना चाहिए। और उनका निवास हर घर में होगा । इतना कहकर वे श्री मंदिर में प्रवेश करती हैं। सदियों पहले लिखा गया लक्ष्मी पुराण जाती वाद के विरुद्ध मनुष्यता की बात करता है। आज हम जिस नारी सशक्तीकरण एवं नारियों के समान अधिकारों की बात करते हैं, उसका उल्लेख लक्ष्मी पुराण में भक्त कवि बलराम दास ने बहुत पहले ही कर दिया था। इस तरह हमारे पुराण एवं शास्त्र सर्वकालीन एवं युग युगीन है ।

+3 द्वितीय वर्ष की छात्रायें

ज्ञानपीठ पुरस्कार - 2017

कृष्णा सोबती

कृष्णा सोबती - १८ फ़रवरी १९२५, गुजरात (अब पाकिस्तान में)) हिन्दी की कल्पितार्थ (फिक्शन) एवं निबन्ध लेखिका हैं। उन्हें १९८० में साहित्य अकादमी पुरस्कार तथा १९९६ में साहित्य अकादमी अध्येतावृत्ति से सम्मानित किया गया था। अपनी संयमित अभिव्यक्ति और सुथरी रचनात्मकता के लिए जानी जाती हैं। उन्होंने हिंदी की कथा भाषा को विलक्षण ताज़गी दी है। उनके भाषा संस्कार के घनत्व, जीवन्त प्रांजलता और संप्रेषण ने हमारे समय के कई पेचीदा सत्य उजागर किए हैं।

कृष्णा सोबती का जन्म गुजरात में 18 फरवरी 1925 को हुआ था। विभाजन के बाद वे दिल्ली में आकर बस गईं और तब से यही रहकर साहित्य सेवा कर रही हैं। उन्हें 1980 में 'जिन्दी नामा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला था। 1996 में उन्हें साहित्य अकादमी का फेलो बनाया गया जो अकादमी का सर्वोच्च सम्मान है। 2017 में इन्हें भारतीय साहित्य के सर्वोच्च सम्मान "ज्ञानपीठ पुरस्कार" से सम्मानित किया गया है।

कृतियाँ

डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, यारों के यार, तिन पहाड़, बादलों के घेरे, सूरजमुखी अंधेरे के, ज़िन्दगी़नामा, ऐ लड़की, दिलोदानिश, हम हशमत भाग एक तथा दो और समय सरगम तक उनकी कलम ने उत्तेजना, आलोचना विमर्श, सामाजिक और नैतिक बहसों की जो फिज़ा साहित्य में पैदा की है उसका स्पर्श पाठक लगातार महसूस करता रहा है। हाल ही में उनकी लंबी कहानी ए लडकी का स्वीडन में मंचन हुआ।

सम्मान एवं पुरस्कार

साहित्य अकादमी की महत्तर सदस्यता समेत कई राष्ट्रीय पुरस्कारों और अलंकरणों से शोभित कृष्णा सोबती ने पाठक को निजि के प्रति सचेत और समाज के प्रति चैतन्य किया है। आपको हिंदी अकादमी, दिल्ली की ओर से वर्ष २०००-२००१ के शलाका सम्मान से सम्मानित किया गया था। उन्हें वर्ष २०१७ का ५३वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा हुई है।

जन्म	18 फ़रवरी 1925 गुजरात
व्यवसाय	आख्यायिका लेखक, रचनाकार
राष्ट्रीयता	भारतीय
उल्लेखनीय कार्य	मित्रो मरजानी, डार से बिछुरी, सूरजमुखी अंधेरे के आदि
उल्लेखनीय सम्मान	1999: कछा चुडामणी पुरस्कार 1981: शिरोमणी पुरस्कार 1982: हिन्दी अकादमी अवार्ड 2000-2001: शलाका पुरस्कार

1980: साहित्य अकादमी अवार्ड

1996: साहित्य अकादमी फेलोशिप

2017 : ज्ञानपीठ पुरस्कार (भारतीय साहित्य का सर्वोच्च सम्मान)

जवाहरलाल नेहरू के विचार

1- वफादार और कुशल, महान कारण के लिए कार्य करते हैं, भले ही उन्हें तुरंत पहचान ना मिले, अंततः उसका फल मिलता है।

2- शांति राष्ट्रों का संबंध नहीं है, यह एक मनः स्थिति है जो आत्मा की निर्मलता से आती है, शांति सिर्फ युद्ध का अभाव नहीं है, यह मन की एक अवस्था है।

3- यदि पूँजीवादी समाज की शक्तियों को अनियंत्रित छोड़ दिया जाए तो वो अमीर को और अमीर और गरीब को और गरीब बना देंगी।

सोनिया नायक

+3 द्वितीय वर्ष

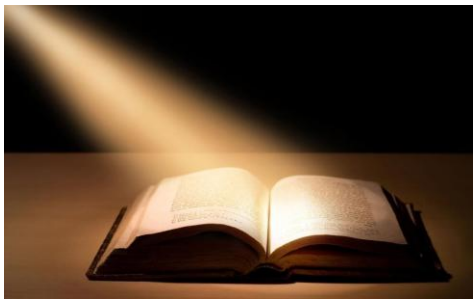

जिंदगी

जिंदगी एक खुली किताब की तरह है, चाहे या ना चाहे हमें जिंदगी को आगे बढाना पड़ेगा क्योंकि जिंदगी भगवान का दिया हुआ है। दिन और रात की तरह जीवन में सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख लगा रहता है। जिंदगी दुःख का सागर है कि पार करके उसे किनारा तक पहुंचना है, जो कि हमारा मंजिल है। जहां सुख है, तृप्ति है। रात में तारे न मिले तो दिल के दीपक जलाकर अंधकार को दूर करके उजाले को सामने लाता है। जिंदगी एक वचन की तरह है, सबको उस वचन को निभाना पड़ेगा।

जिंदगी की उलझने हमारी शरारत कम कर देती है। और लोग समझने लगते है कि हम समझदार ही गये है।

संध्या रानी शाहू

+3 द्वितीय वर्ष

नारी

नारी का स्थान महत्पूर्ण है। जो हर रूप में सबकी सहायता करती है। जैसे कि बेटी के रूप में, बहन की रूप में, दोस्त के रूप में, पत्नी के रूप में, और माँ के रूप में पौराणिक काल से लेकर आज भी मनुष्य को स्त्री अबला और दुर्बल समझती है। लेकिन उन्हें ये नहीं पता कि नारी आरम्भ भी है और विनाश भी है। कितनी ही जगह पर नारी का स्थान नीचा दिखाया गया और अपमान दिया गया है। लड़की पैदा होने से लेकर बुढ़ापे तक सबके इच्छा से चलती है। दूसरों की खुशी के लिए अपनी खुशियों की तिलांजलि दे देती है।

क्योंकि नारी महान है।

प्रियंका शाहू

+3 द्वितीय वर्ष

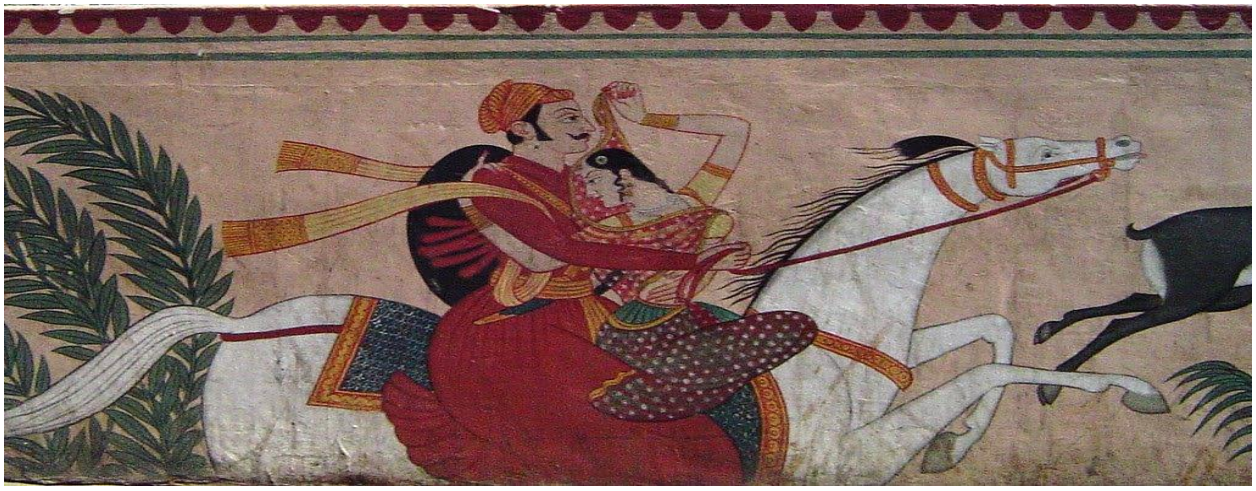

हिन्दी साहित्य में रासो काव्य परम्परा और 'पृथ्वीराज रासो'

आदिकाल के हिन्दी-साहित्य में वीर गाथायें प्रमुख हैं। वीर गाथाओं के रुप में ही "रासो' ग्रन्थों की रचनायें हुई हैं।

हिन्दी साहित्य में "रास' या "रासक' का अर्थ लास्य से लिया गया है जो नृत्य का एक भेद है। अतः इसी अर्थ भेद के आधार पर गीत नृत्य परक रचनायें "रास' नाम से जानी जाती हैं "रासो' या "रासउ' में विभिन्न प्रकार के अडिल्ल, ढूसा, छप्पर, कुण्डलियां, पद्धटिका आदि छन्द प्रयुक्त होते हैं। इस कारण ऐसी रचनायें "रासो' के नाम से जानी जाती हैं।

"रासो' शब्द विद्वानों के लिए विवाद का विषय रहा है। इस पर किसी भी विद्वान का निश्चयात्मक एवं उपयुक्त मत प्रतीत नहीं होता। विभिन्न विद्वानों ने अनेक प्रकार से इस शब्द की व्याख्या करने का प्रयास किया है। कुछ विद्वानों ने अनेक प्रकार से इस शब्द की व्याख्या करने का प्रयास किया है। कुछ विद्वानों ने "रासो' की व्युत्पत्ति "रहस्य' शब्द के "रसह' या "रहस्य' का प्राकृत रुप मालूम से मानी जाती है। श्री रामनारायण दूगड लिखते हैं- "रासो' या रासो शब्द "रहस' या "रहस्य' का प्राकृत रुप मालूम पड़ता है। इसका अर्थ गुप्त बात या भेद है। जैसे कि शिव रहस्य, देवी रहस्य आदि ग्रन्थों के नाम हैं, वैसे शुद्ध नाम पृथ्वीराज रहस्य है जोकि प्राकृत में पृथ्वीराज रास, रासा या रासो हो गया।

डॉ. काशी प्रसाद जायसवाल और कविराज श्यामदास के अनुसार "रहस्य' पद का प्राकृत रुप रहस्सो बनता है, जिसका कालान्तर में उच्चारण भेद से बिगड़ता हुआ रुपान्तर रासो बन गया है। रहस्य रहस्सो रअस्सो रासो इसका विकास क्रम है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल "रासो' की व्युत्पत्ति "रसायण' से मानते हैं। डॉ उदयनारायण तिवारी "रासक शब्द से रासो' का उदभव मानते हैं।

वीसलदेव रासो में "रास' और "रासायण' शब्द का प्रयोग काव्य के लिए हुआ है। ""नाल्ह रसायण आरंभई", एवं ""रास रसायण सुणै सब कोई" आदि।

रस को उत्पन्न करने वाला काव्य रसायन है। वीसलदेव रासो में प्रयुक्त "रसायन' एवं "रसिय' शब्दों से "रासो' शब्द बना।

प्रो. ललिता प्रसाद सुकुल रसायण को रस की निष्पत्ति का आधार मानते हैं।

मुंशी देवी प्रसार के अनुसार-""रासो के मायने कथा के हैं, वह रुढि शब्द है। एक वचन "रासा' और बहुवचन "रासा' हैं। मेवाड, ढूढाड और मारवाड में झगड़ने को भी रासा कहते हैं। जैसे यदि कई आदमी झगड़ रहे हों, या वाद विवाद कर रहे हों, तो तीसरा आकर पूछेगा "कांई रासो है' है। लम्बी चौडी वार्ता को भी रासो और रसायण कहते हैं। बकवाद को भी रासा और रामायण ढूंढाण में बोलते हैं। कांई रामायण है? क्या बकवाद है? यह एक मुहावरा है। ऐसे ही रासो भी इस विषय में बोला जाता है, कांई रासो है?"

महामहोपाध्याय डॉ. हरप्रसाद शास्री-""राजस्थान के भाट चारण आदि रासा (क्रीडा या झगड़ा) शब्द से रासो का विकास बतलाते हैं।"

गार्सा-द तासी ने रासो शब्द राजसूय से निकला बतलाया है।

डॉ. ग्रियर्सन "रासो' का रुप रासा अथवा रासो मानते हैं तथा उसकी निष्पत्ति "राजादेश' से हुई बतलाते हैं। इनके अनुसार-""इस रासो शब्द की निष्पत्ति "राजादेश' से हुई है, क्योंकि आदेश का रुपान्तर आयसु है।"

महामहोपाध्याय डॉ गौरीशंकर हीराचन्द ओझा हिन्दी के "रासा' शब्द को संस्कृत के "रास' शब्द से अनुस्यूत कहते हैं। उनके मतानुसार-"" मैं रासा शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के रास शब्द से मानता हूँ। रास शब्द का अर्थ विलास भी होता है (शब्द कल्पदुम चतुर्थ काण्ड) और विलास शब्द चरित, इतिहास आदि के अर्थ में प्रचलित है।"

डॉ. ओझा जी ने अपने उपर्युक्त मत में रासा का अर्थ विलास बतलाया है जबकि श्री डी. आर. मंकड "रास' शब्द की उत्पत्ति तो संस्कृत की "रास' धातु से बतलाते हैं, पर इसका अर्थ उन्होंने जोर से चिल्लाना लिया है, विलास के अर्थ में नहीं।

डॉ. दशरथ शर्मा एवं डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी का कथन है कि "रास' परम्परा की गीत नृत्य परक रचनायें ही आगे चलकर वीर रस के पद्यात्मक इति वृत्तों में परिणत हो गई। ""रासो प्रधानतः गानयुक्त नृत्य विशेष से क्रमशः विकसित होते-होते उपरुपक और किंफर उपरुपक से वीर रस के पद्यात्मक प्रबन्धों में परिणत हो गया।"

""इस गेय नाट्यों का गीत भाग कालान्तर में क्रमशः स्वतन्त्र श्रव्य अथवा पाठ्य काव्य हो गया और इनके चरित नायकों के अनुसार इसमें युद्ध वर्णन का समावेश हुआ।"

पं. विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदी रासो शब्द को "राजयश' शब्द से विनिश्रत हुआ मानते हैं। साहित्याचार्य मथुरा प्रसाद दीक्षित रासो पद का जन्म राज से बतलाते हैं।
इन अभिमतों के विश्लेषण का निष्कर्ष रासो शब्द "रास' का विकास है।

बुन्देलखण्ड में कुछ ऐसी उक्तियाँ भी पाई जाती है, जिनसे रासो शब्द के स्वरुप पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ता है, जैसे ""होन लगे सास बहू के राछरे"। यह "राछरा' शब्द रासो से ही सम्बन्धित है। सास बहू के बीच होने वाले वाक्युद्ध को प्रकट करने वाला यह "राछरा' शब्द बड़ी स्वाभाविकता से रायसा या रासो के शाब्दिक महत्व को प्रगट करता है। वीर काव्य परम्परा में यह रासो शब्द युद्ध सम्बन्धी कविता के लिए ही प्रयुक्त हुआ है। इसका ही बुन्देलखण्डी संस्करण "राछरौ' है।

उपर्युक्त सभी मतों के निष्कर्षस्वरुप यह एक ऐसा काव्य है जिसमें राजाओं का यश वर्णन किया जाता है और यश वर्णन में युद्ध वर्णन स्वतः समाहित होता है।

रासो काव्य परम्परा

रासो काव्य परम्परा हिन्दी साहित्य की एक विशिष्ट काव्यधारा रही है, जो वीरगाथा काल में उत्पन्न होकर मध्य युग तक चली आई। कहना यों चाहिए कि आदि काल में जन्म लेने वाली इस विधा को मध्यकाल में विशेष पोषण मिला। पृथ्वीराज रासो' से प्रारम्भ होने वाली यह काव्य विधा देशी राज्यों में भी मिलती है। तत्कालीन कविगण अपने आश्रयदाताओं को युद्ध की प्रेरणा देने के लिए उनके बल पौरुष आदि का अतिरंजित वर्णन इन रासो काव्यों में करते रहे हैं।

रासो काव्य परम्परा में सर्वप्रथम ग्रन्थ "पृथ्वीराज रासो' माना जाता है। संस्कृत, जैन और बौद्ध साहित्य में "रास', "रासक' नाम की अनेक रचनायें लिखी गईं। गुर्जर एवं राजस्थानी साहित्य में तो इसकी एक लम्बी परम्परा पाई जाती है।

यह निर्विवाद सत्य है कि संस्कृत काव्य ग्रन्थों का हिन्दी साहित्य पर बहुत प्रभाव पड़ा। संस्कृत काव्य ग्रन्थों में वीर रस पूर्ण वर्णनों की कमी नहीं है। ऋगवेद में तथा शतपथ ब्राह्मण में युद्ध एवं वीरता सम्बन्धी सूक्त हैं। महाभारत तो वीर काव्य ही है। यहीं से सूत, मागध आदि द्वारा राजाओं की प्रशंसा का सूत्रपात हुआ जो आगे चलकर भाट, चारण, ढुलियों आदि द्वारा अतिरंजित रुप को प्राप्त कर सका। वीर काव्य की दृष्टि से "रामायण' में भी युद्ध के अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन हैं। "किरातार्जुनीय, में वीरोक्तियों द्वारावीर रस की सृष्टि बड़ी स्वाभाविक है। "उत्तर रामचरित' में जहाँ "एको रसः करुण एव' का प्रतिपदान है वहीं चन्द्रकेतु और लव के वीर रस से भरे वाद विवाद भी हैं। भ नारायण कृत "वेणी संहार' में वीर रस का अत्यन्त सुन्दर परिपाक हुआ है। इससे स्पष्ट है कि हिन्दी की वीर काव्य प्रवृति संस्कृत से ही विनिश्रित हुई है। डॉ. उदय नारायण तिवारी ने "वीर काव्य' में हिन्दी की वीर काव्यधारा का उद्गम संस्कृत की वीर रस रचनाओं से माना है।

रासो परम्परा दो रुपों में मिलती है-प्रबन्ध काव्य और वीरगीत। प्रबन्ध काव्य में "पृथ्वी राज रासो' तथा वीर गीत के रुप में "वीसलदेव रासो' जैसी रचनायें हैं। जगनिक का रासो अपने मूल रुप में तो अप्राप्त है किन्तु, आल्ह खण्ड' नाम की वीर रस रचना उसी का

परिवर्तित रुप है। आल्हा, ऊदल एवं पृथ्वीराज की लड़ाइयों से सम्बन्धित वीर गीतों की यह रचना हिन्दी भाषा क्षेत्र के जनमानस में गूंज रही है।

आदि काल की प्रमुख रचनायें पृथ्वीराज रासो, खुमान ख़ासो एवं वीसलदेव रासो हैं। हिन्दी साहित्य के प्रारम्भ काल की ये रचनायें वीर रस एवं श्रृंगार रस का मिला-जुला रुप प्रस्तुत करती हैं।

जैन साहित्य में "रास' एवं "रासक' नम से अभिहित अनेक रचनायें हैं जिनमें सन्देश रासक, भरतेश्वर बाहुबलि रास, कच्छूलिरास आदि प्रतिनिधि हैं।
आदि काल की बहुत सी रचनायें तो अनुपलब्ध ही हैं। संकेत सूत्रों के आधर पर सूचना मात्र मिलती है अथवा काल क्रमानुसार कुछ रचनाओं का रुप ऐसा परिवर्तित हो गया है कि उनके मूल रुप का अनुमान भी लगाना कठिन हो गया है। "पृथ्वीराज रासो' जैसी वहदाकार रचनाओं की ऐतिहासिकता संदिग्ध है। उसकी तिथियों, घटनाओं आदि के विषय में विद्वानों में मतभेद हैं।

पृथ्वीराज रासो एवं वीसलदेव रासो को कुछ विद्वान सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दी की रचना मानते हैं। डॉ. माताप्रसाद गुप्त इन्हें १३ वीं १४ वीं शताब्दी का मानते हैं।

यह रासो परम्परा हिन्दी के जन्म से पूर्व अपभ्रंश में वर्तमान थी तथा हिन्दी की उत्पत्ति के साथ'साथ गुर्जर साहित्य में।

अपभ्रंश में "मु"जरास' तथा "सन्देश रासक' दो रचनायें हैं। इनमें से मुंजरास अनुपलब्ध है। केवल हेमचन्द्र के "सिद्ध हेम' व्याकरण ग्रन्थ में तथा मेरु तुंग के प्रबन्ध् चिन्तामणि में इसके कुछ छन्द उद्धृत किए गये हैं। डॉ. माता प्रसाद गुप्त "मुंजरास' की रचना काल १०५४ वि. और ११९७ वी. के बीच मानते हैं, क्योंकि मुंज का समय १००७ वि. से १०५४ वि. का है। "संदेश रासक' को विद्वानों ने १२०७ वि. की रचना माना है। पृथ्वीराज रासो की तरह "मुंजरास' एवं "संदेश रास भी प्रबन्ध रचनायें हैं। पृथ्वीराज रासो दुखान्त रचना है। वीसलदेव रासो सुखान्त रचना है एवं इसी तरह "संदेश रासकद्' सुखान्त एवं "मुंजरास' दुखान्त रचनायें हैं।

अपभ्रंश काल की एक और रचना जिन्दत्त सूरि का "उपदेश रसायन रास' है। यह भक्ति परक धार्मिक रचना है। डॉ. माता प्रसाद गुप्त जिनदत्त सूरि का स्वर्गवास सं. १२९५ वि. में मानते हैं। अतः रचना सं. १२९५ वि. के कुछ पूर्व की ही होनी चाहिए। अपभ्रशं की उपर्युक्त रचनायें रासो काव्य की मुख्य प्रवृत्तियों की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं करतीा

गुर्जर साहित्य में लिखी रासो रचनायें आकार में छोटी हैं। इनके रचयिता जैन कवि थे और उन्होंने इनकी रचना जैन धर्म सिद्धान्तों के अनुसार की।
सर्वप्रथम "शालिभ्रद सूरि' की "भरतेश्वर बाहुबलि रास' एवं "वद्धि रास' रचनायें उपलब्ध होती है। "भरतेश्वर बाहुबलि रास' राजसत्ता के लिए हुआ भरतेश्वर एवं बाहुबलि का संघर्ष है जो जैन तीथर्ंकर स्वामी ऋषभदेव के पुत्र थे। इसकी रचना वीर रस में हुई है। "बुद्धि रास' शान्त रस में लिखा गया उपदेश परक ग्रन्थ है।

‘पृथ्वीराज रासो’

चंदबरदाई को हिंदी का पहला कवि और उनकी रचना पृथ्वीराज रासो को हिंदी की पहली रचना होने का सम्मान प्राप्त है। पृथ्वीराज रासो हिंदी का सबसे बड़ा काव्य-ग्रंथ है। इसमें 10,000 से अधिक छंद हैं और तत्कालीन प्रचलित 6 भाषाओं का प्रयोग किया गया है। इस ग्रंथ में उत्तर भारतीय क्षत्रिय समाज व उनकी परंपराओं के विषय में विस्तृत जानकारी मिलती है, इस कारण ऐतिहासिक दृष्टि से भी इसका बहुत महत्व है। वे भारत के अंतिम हिंदू सम्राट पृथ्वीराज चौहान तृतीय के मित्र तथा राजकवि थे। पृथ्वीराज ने 1165 से 1192 तक अजमेर व दिल्ली पर राज किया। यही चंदबरदाई का रचनाकाल था।

११६५ से ११९२ के बीच जब पृथ्वीराज चौहान का राज्य अजमेर से दिल्ली तक फैला हुआ था, उसके राज कवि चंद बरदाई ने पृथ्वीराज रासो की रचना की। यह हिन्दी का प्रथम महाकाव्य माना जा सकता है। इस महाकाव्य में पृथ्वीराज चौहान के जीवन और चरित्र का वर्णन

किया गया है। चंद बरदाई पृथ्वीराज के बचपन के मित्र थे और उनकी युद्ध यात्राओं के समय वीर रस की कविताओं से सेना को प्रोत्साहित भी करते थे।

पृथ्वीराजरासो ढाई हजार पृष्ठों का बहुत बड़ा ग्रंथ है जिसमें ६९ समय (सर्ग या अध्याय) हैं। प्राचीन समय में प्रचलित प्रायः सभी छंदों का इसमें व्यवहार हुआ है। मुख्य छन्द हैं – कवित्त (छप्पय), दूहा(दोहा), तोमर, त्रोटक, गाहा और आर्या। जैसे कादंबरी के संबंध में प्रसिद्ध है कि उसका पिछला भाग बाण भट्ट के पुत्र ने पूरा किया है, वैसे ही रासो के पिछले भाग का भी चंद के पुत्र जल्हण द्वारा पूर्ण किया गया है। रासो के अनुसार जब शाहाबुद्दीन गोरी पृथ्वीराज को कैद करके ग़ज़नी ले गया, तब कुछ दिनों पीछे चंद भी वहीं गए। जाते समय कवि ने अपने पुत्र जल्हण के हाथ में रासो की पुस्तक देकर उसे पूर्ण करने का संकेत किया। जल्हण के हाथ में रासो को सौंपे जाने और उसके पूरे किए जाने का उल्लेख रासो में है –

पुस्तक जल्हण हत्थ दै चलि गज्जन नृपकाज ।
रघुनाथनचरित हनुमंतकृत भूप भोज उद्धरिय जिमि ।
थिराजसुजस कवि चंद कृत चंदनंद उद्धरिय तिमि ।।

रासो में दिए हुए संवतों का ऐतिहासिक तथ्यों के साथ अनेक स्थानों पर मेल न खाने के कारण अनेक विद्वानों ने पृथ्वीराजरासो के समसामयिक किसी कवि की रचना होने में संदेह करते है और उसे १६वीं शताब्दी में लिखा हुआ ग्रंथ ठहराते हैं। इस रचना की सबसे पुरानी प्रति बीकानेर के राजकीय पुस्तकालय मे मिली है कुल ३ प्रतिया है। रचना के अन्त मे पृथ्वीराज द्वारा शब्द भेदी बाण चला कर गौरी को मारने की बात भी की गयी है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी, चन्द वरदाई आदिकाल के श्रेष्ठ कवि थे। उनका जीवन काल बारहवीं शताब्दी में था। एक उत्तम कवि होने के साथ, वह एक कुशल योद्धा और राजनायक भी थे। वह पृथ्वीराज चौहान के अभिन्न मित्र थे। उनका रचित महाकाव्य "पृथ्वीराज रासो" हिन्दी का प्रथम महाकाव्य माना जाता है। इस महाकाव्य में ६९ खण्ड हैं और इसकी गणना हिन्दी के महान ग्रन्थों में की जाती है। चन्द वरदाई के काव्य की भाषा पिंगल थी जो कालान्तर में बृज भाषा के रूप में विकसित हुई। उनके काव्य में चरित्र चित्रण के साथ वीर रस और श्रृंगार रस का मोहक समन्वय है। किन्तु पृथ्वीराज रासो को पढ़ने से ज्ञात होता है कि महाराजा पृथ्वीराज चौहान ने जितनी भी लड़ाइयाँ लड़ीं, उन सबका प्रमुख उद्देश्य राजकुमारियों के साथ विवाह और अपहरण ही दिखाई पड़ता है। इंछिनी विवाह, पद्मावती समया, संयोगिता विवाह आदि अनेकों प्रमाण पृथ्वीराज रासो में पृथ्वीराज की शृंगार एवं विलासप्रियता की ओर भी संकेत करते हैं।

नाम-मनीषा साहू

+3 प्रथम वर्ष

हंसावली

हंसावली एक प्रमुख प्रेमाख्यान काव्य के रूप में सुप्रसिद्ध हैं। इस काव्य में राजस्थानी भाषा के प्राचीन रूपो का प्रयोग हुआ है । इस काव्य को गुजराती के विद्वानों ने पुरानी गुजराती का ग्रंथ भी मानते हैं। इस प्रेमाख्यान मे चित्रित प्रेम साहस और शौर्य का चमत्कार मिश्रण हैं। इस काव्य में अनेक वीरकथा और प्रेमकथा उल्लेखनीय हैं। जिसमें एक प्रसिद्ध प्रेमकथा है पाटण की राजकुमारी हंसावली की, जो देखने में बेहद खूबसूरत होती हैं। ये राजकुमारी सुन्दरता के साथ साथ अस्त्र शस्त्र या तलवार बाजी में भी माहिर होती हैं। राजकुमारी इतनी सुंदर थी कि उन्हें जो भी एकबार देखता वो पुरुष उनके रूप में मोहित होकर भाव विभोर हो जात था। जब ऐसी बातें राजकुमारी को मालूम चलती है तब वो क्रोधित हो जाती है, और उन पुरुषों को ढूंढ कर हत्या कर देती थी। हमेशा वो ऐसा ही करती थी। कई महीनों के बाद एक दूसरे राज्य का राजकुमार सपनों में पाटण की राजकुमारी की एक झलक देख कर होश खो बेठता है ,और अगले दिन राज्य के मंत्री के साथ एक राजकुमार की तरह नहीं अपितु एक योगी के वेश में उस राजकुमारी को ढूंढने को चले जाते है। उन्हें रास्तों में बहुत सारी कठिनाई को सामना करना पड़ता है। उन्हें कठिनाई का सामना करना पड़ता है इसलिए कि वो एक राजकुमार की तरह नहीं, बल्कि एक योगी के वेश में विचरण कर रहे थे, इसलिए उन्हें इतनी सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वो जो भी हो अंत मे राजकुमार राजकुमारी के पास पहुँच जाते हैं, और उस पत्थर दिल राजकुमारी को अपने प्रेम के शीशे में उतार देता है। यानी कि राजकुमारी राजकुमार को प्रेम करने लगती है। राजकुमार सिर्फ उनके दिल को ही नहीं, बल्कि राजकुंमारी जो पूर्व जन्म के किसी संस्कार वश पखवाड़े में पांच पुरुषों की हत्या की प्रण ले रखी थी, उससे उनको मुक्त कर दिया। इसी कारण वश राजकुमारी पुरुषों

की हत्या कर देती थी। इस हत्या करने की पीछे एक कारण था। राजकुमार ने जब उनको इस हत्या के पीछे का कारण बताया या दर्शाया तब राजकुमारी को पूर्व जन्म की घटना याद आयी और राजकुमारी ने अपने आप को उस नियम से मुक्त कर दिया। पूर्व जन्म की घटना इस प्रकार की थी कि उस जन्म में राजकुमारी एक पक्षणि थी। वो घने जंगल में रहती थी एक दिन जंगल मे आग लग जाने के कारण उसका साथी यानी नर पक्षी उसे तथा उसकी अंडों को छोड़कर, और उनको जलती हुआ छोड़कर अपनी जान बचाने के लिये भाग गया। यह सब देखकर पक्षणि को बहत बुरा लगता हैं, और वो गुस्से में पुरुषों की हत्या का नियम ले लेती हैं। यह याद आते ही वह नियम से मुक्त हो जाती है। अंत में राजकुमार और राजकुमारी का विवाह हो जाता हैं। दोनों खुशी से अपने राज्य में रहते हैं।

कविता प्रधान

+3 प्रथम वर्ष

श्रद्धांजली

कुँवर नारायण (19 सितंबर 1927 – 17 नवंबर 2017)

कुँवर नारायण का जन्म १९ सितंबर १९२७ को हुआ। नई कविता आंदोलन के सशक्त हस्ताक्षर कुँवर नारायण अज्ञेय द्वारा संपादित *तीसरा सप्तक* (१९५९) के प्रमुख कवियों में रहे हैं। कुँवर नारायण को अपनी रचनाशीलता में इतिहास और मिथक के जरिये वर्तमान को देखने के लिए जाना जाता है। कुंवर नारायण का रचना संसार इतना व्यापक एवं जटिल है कि उसको कोई एक नाम देना सम्भव नहीं। यद्यपि कुंवर नारायण की मूल विधा कविता रही है पर इसके अलावा उन्होंने कहानी, लेख व समीक्षाओं के साथ-साथ सिनेमा, रंगमंच एवं अन्य कलाओं पर भी बखूबी लेखनी चलायी है। इसके चलते जहाँ उनके लेखन में सहज संप्रेषणीयता आई वहीं वे प्रयोगधर्मी भी बने रहे। उनकी कविताओं-कहानियों का कई भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है। 'तनाव' पत्रिका के लिए उन्होंने कवाफी तथा ब्रोर्खेस की कविताओं का भी अनुवाद किया है। 2009 में कुँवर नारायण को वर्ष 2005 के लिए देश के साहित्य जगत के सर्वोच्च सम्मान ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

जीवन परिचय

उन्होने इंटर तक की पढ़ाई विज्ञान विषय से की लेकिन आगे चल कर वे साहित्य के विद्यार्थी बने और १९५१ में लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए. किया। वे उत्तर प्रदेश के संगीत नाटक अकादमी के १९७६ से १९७९ तक उप पीठाध्यक्ष रहे और १९७५ से १९७८ तक अज्ञेय द्वारा संपादित मासिक पत्रिका *नया प्रतीक* के संपादक मंडल के सदस्य भी रहे। पहले माँ और फिर बहन की असामयिक मौत ने उनकी अन्तरात्मा को झकझोर कर रख दिया, पर टूट कर भी जुड़ जाना उन्होंने सीख लिया था। पैतृक रूप में उनका कार का व्यवसाय था, पर इसके साथ उन्होंने साहित्य की दुनिया में भी प्रवेश करना मुनासिब समझा। इसके पीछे वे कारण गिनाते हैं

कि साहित्य का धंधा न करना पड़े इसलिए समानान्तर रूप से अपना पैतृक धंधा भी चलाना उचित समझा।

साहित्य यात्रा

एम०एम० करने के ठीक पाँच वर्ष बाद वर्ष १९५६ में २९ वर्ष की आयु में उनका प्रथम काव्य संग्रह चक्रव्यूह नाम से प्रकाशित हुआ। अल्प समय में ही अपनी प्रयोगधर्मिता के चलते उन्होंने पचान स्थापित कर ली और नतीजन अज्ञेय जी ने वर्ष १९५९ में उनकी कविताओं को केदारनाथ सिंह, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और विजयदेव नारायण साही के साथ 'तीसरा सप्तक' में शामिल किया। यहाँ से उन्हें काफी प्रसिद्धि मिली। १९६५ में 'आत्मजयी' जैसे प्रबंध काव्य के प्रकाशन के साथ ही कुंवर नारायण ने असीम संभावनाओं वाले कवि के रूप में पहचान बना ली। फिर तो आकारों के आसपास (कहानी संग्रह-१९७१), परिवेश : हम-तुम, अपने सामने, कोई दूसरा नहीं, इन दिनों, आज और आज से पहले (समीक्षा), मेरे साक्षात्कार और हाल ही में प्रकाशित वाजश्रवा के बहाने सहित उनकी तमाम कृतियाँ आईं।

समालोचना

कुँवर नारायण हमारे दौर के सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार हैं। उनकी काव्ययात्रा 'चक्रव्यूह' से शुरू हुई। इसके साथ ही उन्होंने हिन्दी के काव्य पाठकों में एक नई तरह की समझ पैदा की। उनके संग्रह 'परिवेश हम तुम' के माध्यम से मानवीय संबंधों की एक विरल व्याख्या हम सबके सामने आई। उन्होंने अपने प्रबंध 'आत्मजयी' में मृत्यु संबंधी शाश्वत समस्या को कठोपनिषद का माध्यम बनाकर अद्भुत व्याख्या के साथ हमारे सामने रखा। इसमें नचिकेता अपने पिता की आज्ञा, 'मृत्य वे त्वा ददामीति' अर्थात मैं तुम्हें मृत्यु को देता हूँ, को शिरोधार्य करके यम के द्वार पर चला जाता है, जहाँ वह तीन दिन तक भूखा-प्यासा रहकर यमराज के घर लौटने की प्रतीक्षा करता है। उसकी इस साधना से प्रसन्न होकर यमराज उसे तीन वरदान माँगने की अनुमति देते हैं। नचिकेता इनमें से पहला वरदान यह माँगता है कि उसके पिता वाजश्रवा का क्रोध समाप्त हो जाए। नचिकेता के इसी कथन को आधार बनाकर कुँवर नारायणजी की जो कृति 2008 में आई, 'वाजश्रवा के बहाने', उसमें उन्होंने पिता वाजश्रवा के मन में जो उद्वेलन चलता रहा उसे अत्यधिक सात्विक शब्दावली में काव्यबद्ध किया है। इस कृति की विरल विशेषता यह है कि 'अमूर्त'को एक अत्यधिक सूक्ष्म संवेदनात्मक शब्दावली देकर नई उत्साह परख जिजीविषा को वाणी दी है। जहाँ एक ओर आत्मजयी में कुँवरनारायण जी ने मृत्यु जैसे विषय का निर्वचन किया है, वहीं इसके ठीक विपरीत 'वाजश्रवा के बहाने'कृति में अपनी विधायक संवेदना के साथ जीवन के

आलोक को रेखांकित किया है। यह कृति आज के इस बर्बर समय में भटकती हुई मानसिकता को न केवल राहत देती है, बल्कि यह प्रेरणा भी देती है कि दो पीढ़ियों के बीच समन्वय बनाए रखने का समझदार ढंग क्या हो सकता है।

प्रकाशित कृतियाँ

कविता संग्रह - *चक्रव्यूह* (१९५६), *तीसरा सप्तक* (१९५९), *परिवेश : हम-तुम* (१९६१), *अपने सामने* (१९७९), *कोई दूसरा नहीं* (१९९३), *इन दिनों* (२००२)।
खंड काव्य - *आत्मजयी* (१९६५) और *वाजश्रवा के बहाने* (२००८)।
कहानी संग्रह - *आकारों के आसपास* (१९७३)।
समीक्षा विचार - *आज और आज से पहले* (१९९८), *मेरे साक्षात्कार* (१९९९), *साहित्य के कुछ अन्तर्विषयक संदर्भ* (२००३)।
संकलन - कुंवर नारायण-संसार(चुने हुए लेखों का संग्रह) २००२,कुँवर नारायण उपस्थिति (चुने हुए लेखों का संग्रह)(२००२), कुँवर नारायण चुनी हुई कविताएँ (२००७), कुँवर नारायण- प्रतिनिधि कविताएँ (२००८)

पुरस्कार सम्मान

कुँवर नारायण को वर्ष 2005 के ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। छह अक्टूबर को राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने उन्हें देश के सबसे बड़े साहित्यिक सम्मान से सम्मानित किया।

ज्ञानपीठ के अलावा कुँवर नारायण को साहित्य अकादमी पुरस्कार, व्यास सम्मान, कुमार आशान पुरस्कार, प्रेमचंद पुरस्कार, राष्ट्रीय कबीर सम्मान, शलाका सम्मान, मेडल ऑफ़ वॉरसा यूनिवर्सिटी, पोलैंड और रोम के अन्तर्राष्ट्रीय प्रीमियो फ़ेरेनिया सम्मान और २००९ में पद्मभूषण सम्मान से सम्मानित किया गया।

रिश्ता

रिश्ता निभाने आते लोग
रिश्ता निभाके चले जाते
लेकिन क्या है इस दिल में,वह नहीं समझ पाते
रिश्ते के इस बन्धन को अब तोड़ नहीं सकती
टूटा है जो नाता उसे जोड़ नहीं

सकती....

धोखा देना है इनकी फितरत
धोखा खाना ना मेरी आदत
दौड़ती चली जाती हूँ हर हाल में
चाहे हो दिल आहत या शरीर
कठिनाई भरी इस पथ को अब छोड़ नहीं सकती
टूटा है जो नाता उसे जोड़ नहीं सकती.....

पिंकी सिंह

+3 द्वितीय वर्ष

जिंदगी

मुश्किलों से भाग जाना
आसान होता है,
हर पल जिंदगी का इम्तिहान होता है !
लडने़ वाले के कदमों मे जहान होता है !

जिंदगी एक खेल है
यदि तुम इसे खिलाड़ी की तरह
खेलते हे तो जीत सकते हो
लेकिन यदि दर्शक की
तरह देखने हो तो
सिर्फ ताली बजा सकते हो
या दूखी हो सकते हो
पर जीत नहीं सकते !

जासमिन बेगम,

+3 द्वितीय वर्ष

परमात्मा और किसान

एक बार एक किसान भगवान से बड़ा नाराज़ हो गया। कभी बाढ़ आजाये तो कभी सूखा पड़ जाए, कभी धूप बहुत तेज हो जाए तो कभी ओले पड जाये! हर बार कुछ ना कुछ कारण से उसकी फसल खराब हो जाती थी। एक दिन तंग आकर उसने परमात्मा से कहा, देखिये प्रभू आप परमात्मा हो लेकिन लगता है आपको खेती बाड़ी की ज्यादा जानकारी नही है, एक प्रार्थना है कि एक साल मुझे मौका दीजिये जैसा में चाहू वेसा मौसम हो। फिर आप देखना मैं कैसे अन्न के भंडार भर दूंगा। परमात्मा मुस्कुराये और कहा ठीक है। जैसा तुम कहोगे वैसा ही मौसम दूंगा। मैं दखल नही करूँगा।

किसान ने गेहूँ की फसल बोई। जब धूप चाहा तब धूप मिली, जब पानी चाहा तब पानी। और औले, बाढ़, आंधी को उसने आने ही नहीं दिया। समय के साथ फसल बढ़ी और किसान की खुशी भी, क्योंकि ऐसी फसल तो आज तक नहीं हुई थी। किसान ने मन ही मन सोचा अब पता चलेगा परमात्मा को कि फसल कैसे करते हैं। बेकार ही इतने बरस हम किसानों को परेशान करते रहे। फसल काटने का समय भी आया किसान बड़े गर्व से फसल काटने गया, लेकिन जैसे ही फसल काटने लगा एकदम से छाती पर हाथ रख कर बैठ गया। गेहूँ की एक भी बाली के अंदर गेहूँ नहीं था। सारि बालियाँ अंदर से खाली थी। बड़ा दुखी हो कर उसने परमात्मा से कहा, प्रभु ये क्या हुआ?

तब परमात्मा बोले "ये तो होना ही था। तुमने पौधों को संघर्ष का जरा सा भी मौका नहीं दिया। न तेज धूप में उनको तपने दिया न आंधी ओलो से जूझने दिया। उनको किसी प्रकार की चुनौती का एहसास जरा भी नहीं होने दिया। इसीलिए सब पौधे खोखले रह गए। जब आंधी आती है, तेज बारिष होती है. ओले गिरतें हैं, तब पौधे अपने बल से ही खड़े रहतें हैं, वह अपना अस्तित्व बचाने का संघर्ष करता है, और इस संघर्ष से जो बल पैदा होता है वही उसे शक्ति देता है, ऊर्जा देता है। उसकी जीवटता को उभारता है। सोने को भी कुंदन बनाने के लिए आग में तपने, हथौडी से पीटने, गलने जैसी चुनोतियाँ से गुजरना पडता है। तभी उसनमे स्वर्णिम आभा उभरती है और उसे अनमोल बनाती हैं"। उसी तरह जिंदगी में अगर संघर्ष न हो, चुनौती ना हो तो आदमी खोखला ही रह जाता है। उसके अंदर कोई गुण नहीं आ पाता। ये चुनौतियाँ ही है जो आदमी को तलवार रूपी धार देती है, उसे सशक्त और प्रखर बनाती है। अगर जिंदगी में प्रखर बनना है, प्रतिभाशाली बनना है तो चुनौतीयों का सामना करना ही होगा।

सस्मिता महन्ति

+3 प्रथम वर्ष

समय

कोई राजा हो या रंक, कभी बचा नहीं ।
समय के पहिये ने किसी को छोडा नहीं ।।
आदि से अंत तक, देव से लेकर मानव तक ।
पूर्व से पश्चिम तक उत्तर से दक्षिण तक ।
जिसने भी समय को अनदेखा किया है,
उसका तो ना कल और आज बचा है. ।।
कठिन परिश्रम और अभ्यास जिसने भी की है ,
उसका यश ही चारों ओर हुआ है,
प्यार और नादान बच्चों ! हकिकत को जान लो अभी,
भूल भटके से समय को जानकर खोना नहीं कभी ।।

प्रियंका, +3 द्वितीय वर्ष

पाप क्या है ?

पाप क्या है ? इस पर बराबर विचार होता रहा , परंतु इसकी एक निश्चित परिभाषा नही कि जा सकी । जो एक के दृष्टिकोन से पाप है, वही दूसरे के दृष्टिकोन से देखने पर पुण्य लगता है ।

सम्भवतः पापी- से पापी मनुष्य भी नहीं कह सकता है कि वह पापी है हर एक व्यक्ति खुद को अच्छा समझता है। खुद को ठीक तरह से समझना उसके लिए असंम्भव है।

संसार में पाप-पुण्य कुछ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है। प्रत्योक व्यक्ति एक विशेष प्रकार की मनः प्रबृत्ति लेकर उत्पन्न होता है- प्रत्येक व्यक्ति संसार के इस मंच पर अभिनय करने आता है। जो कुछ मनुष्य करता है, वह उसके स्वभाव के प्रतिकूल होता और स्वभाव प्राकृतिक है। मनुष्य अपना स्वामी नही है। वह परिस्थितियों का दास है। वह कर्ता नहीं केवल साधन है। फिर पुण्य और पाप कैसा है?

संसार में इसीलिए पाप की एक परिभाषा नही हो सकी-और न हो सकती है । हम न पाप करते हैं और न पुण्य करते हैं, हम केवल वह करते हैं, जो हमें करना पड़ता है।

पाप क्या है, यह अधिकत्तर अनुभव से ही जाना जा सकता है।

लिजा मिश्र

+3 द्वितीय वर्ष

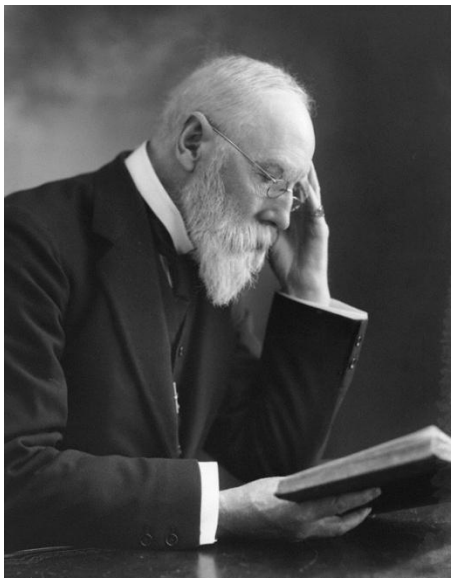

जार्ज ग्रियर्सन

सन 1888 में एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल की पत्रिका की विशेषांक के रुप में जार्ज ग्रियर्सन द्वारा रचित 'द मॉडर्न वेर्नेक्युलर लिटरेचर ऑफ हिंदुस्तान' का प्रकाशन हुआ, जो नाम से 'इतिहास ' न होते हुए भी सच्चे अर्थ में हिंदी सहित्य का पहला इतिहास कहा जा सकता है। इसमें लेखक ने कवियों औऱ लेखकों का कालक्रमानुसार वर्गीकरण करते हुए उनकी प्रवृत्तियों को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

उनके काल-विभाजन संबंधित प्रयास के गुण-दोषों पर आगे अलग रूप में विचार किया जायेगा, किंतु यहां इतना अवश्य कहा जा सकता है कि हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य के स्वरूप एवं विकास के संबंध में जिस दृष्टिकोण का परिचय ग्रियर्सन ने दिया है, वह परवर्ती इतिहासकारों के लिए भी पथप्रदर्शक सिद्ध हुआ। मुख्य बात यह है कि उन्होंने हिंदी साहित्य का भाषा की दृष्टि से क्षेत्र निर्धारित करते हुए स्पष्ट किया कि इसमें न तो संस्कृत-प्राकृत को सम्मिलित किया जा सकता है और न ही अरबी-फ़ारसी मिश्रित उर्दू को। ग्रियर्सन की दूसरी विशेषता यह है कि उन्होंने अपने ग्रंथ के आधार स्रोत के रूप मे तॉसी एवं शिवसिंह शेंगर के ग्रंथों के अतिरिक्त भक्तमाल, गोसाईचारित्र, कालिदास हजार, काव्य-संग्रह आदि सत्रह रचनाओं का उल्लेख करते हुए स्थान-स्थान पर मूलग्रंथ के संदर्भ-संकेत भी दिये है, जिसमे उनके उस तटस्थता, प्रामाणिकता और ईमानदारी का बोध होता है, जो किसी भी इतिहासकार के लिए आवश्यक है।

उन्होंने सामग्री को यथा संभव कालक्रमानुसार प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ग्रंथ को काल खंडों में विभक्त किया गया है और प्रत्येक अध्याय काल विशेष का सूचक है। प्रत्येक काल के गौण कवियों का अध्याय विशेष के अंत में उल्लेख किया गया है। विभिन्न युगों की काव्य-

प्रवृत्तियों की व्याख्या करते हुए उनसे संबंधित सांस्कृतिक परिस्थितियों और प्रेरणा स्त्रोतों के भी उदघाटन का प्रयास उनके द्वारा हुआ है। इसके अतिरिक्त हिंदी साहित्य के विकासक्रम का निर्धारण चारण-काव्य, धार्मिक-काव्य, प्रेम-काव्य, दरवारी-काव्य के रूप में करना तथा सोलहवीं-सत्रहवीं शति के युग को हिन्दी काव्य का स्वर्ण युग मानना ग्रियर्सन की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं।

सस्मिता मोहान्ती
+3 प्रथम वर्ष

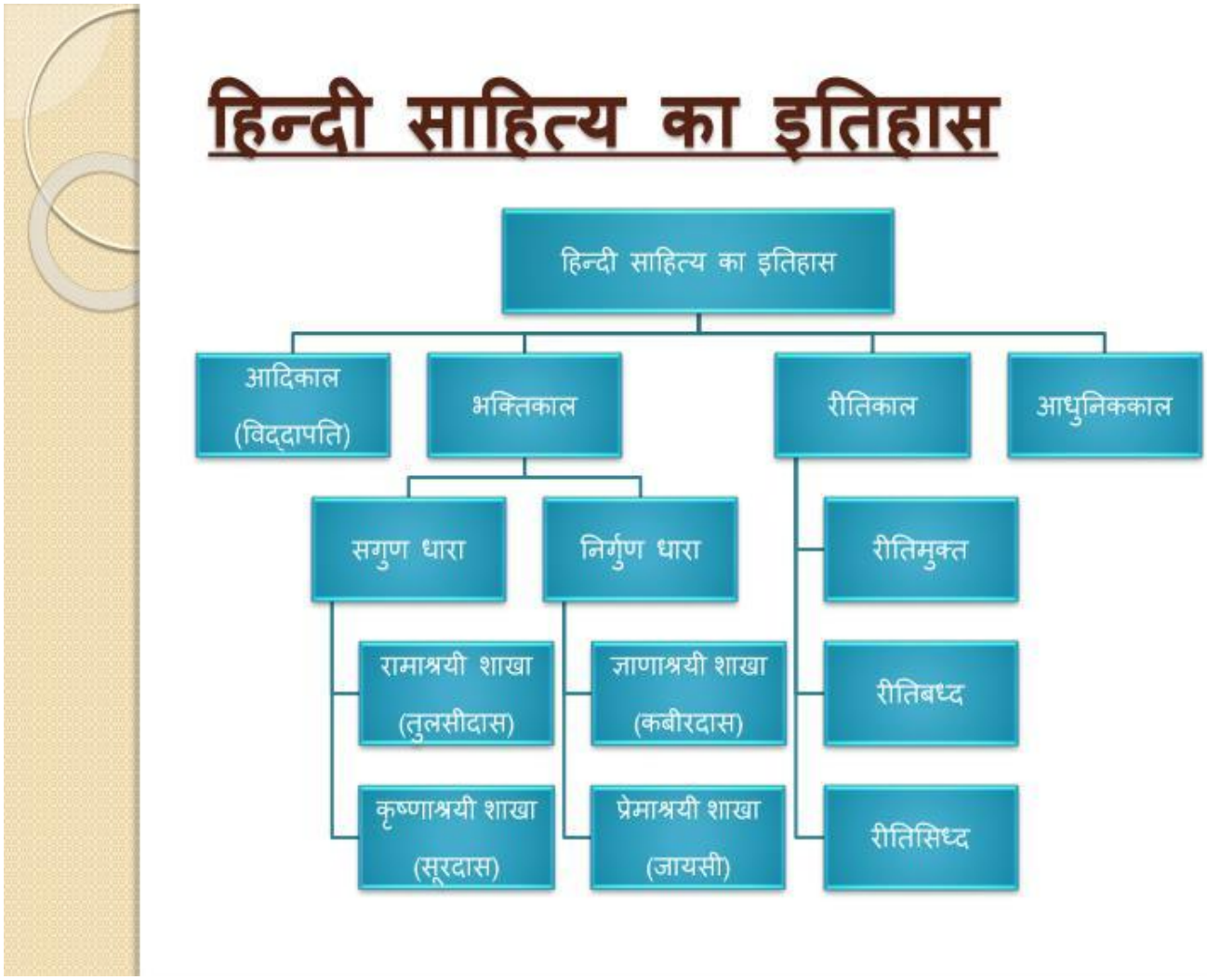

प्रकृति माँ

एक छोटे से शब्द "प्रकृति" में कितना कुछ समाता है, कोई सोच भी नहीं सकता। प्रकृति से हमें जीवन जीने की उमंग मिलती है। बसंत देख कर दिल खुश होता है, सावन में रिमझिम बरसात मन को मोह लेती है, इंद्रधनुष हमारे अंतरंग में रंगीन सपने सजाता है। प्रकृति हमें शारीरिक सुख-सुविधा के साथ-साथ मानसिक सुख भी देती है पर हमारे पास प्रकृति को देने के लिए कोई वस्तु नहीं है। यदि कुछ है तो वह सिर्फ इतना कि हम इसका संरक्षण कर सकें।

किसी चित्रकार, कवि, लेखक और कलाकारों के भाव तभी जागृत होते हैं जब वह प्रकृति की गोद में शांत वातातरण में कल्पना करता है, तभी वह उसे कागज पर उतारता है। इसके बिना तो जीवन में रंग भी नहीं है। जब इंसान मशीनी जीवन जीते-जीते ऊब जाता है तो प्रकृति की गोद में जाकर सुकून की साँस लेना चाहता है। आजकल के युग में मनुष्य प्राकृतिक वस्तुओं की ओर ज्यादा आकर्षित हो रहा है और वस्तुएं खरीदते समय भी वह प्राकृतिक वस्तुओं या प्राकृतिक तव्वों से बनी वस्तुओं को ही महत्व देता है। जब हम प्राकृतिक उत्पादों को इतना महत्व देते हैं तो प्रकृति को क्यों नहीं ? आखिर ये सब वस्तुएं तभी तक उपलब्ध हैं जब तक यह प्रकृति है।

हम प्रकृति से चाहते तो बहुत कुछ हैं लेकिन अपनी कीमत पर। जिस रफ्तार से हम पेड़ काट कर वनों को कम करके उत्पादों का निर्माण कर रहे हैं उतनी रफ्तार से पौधों का रोपण नहीं हो रहा है। हमें पीने के लिए स्वच्छ जल चाहिये लेकिन कल-कारखानों का सारा जहरीला पानी हम नदियों में ही बहाते हैं। खाने के लिए हमें रसायन मुक्त फल-फूल और भोजन चाहिये लेकिन रसायनों का प्रयोग बन्द नहीं करते। यदि ऐसा ही रहा तो दिखावे मात्र प्रयास करने से प्रकृति पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ेगा। जैसा व्यवहार हम प्रकृति के साथ करेंगे वैसा ही वह हमारे साथ करेगी। बेमौसमी बरसात, बाढ़, सूखा, मौसम परिवर्तन, भू-स्खलन, सूखते जंगल, बंजर भूमि इन सब परिणामों के लिए हमें तैयार रहना चाहये। यदि ऐसा ही रहा तो दिन प्रति दिन यह प्रकृति धीरे-धीरे लुप्त होती जायेगी इसलिए हमें प्रत्यन करना चाहिये कि हम प्रकृति का संतुलन बिगाड़े बगैर इसका लाभ उठा सकें। अन्यथा इसे स्वच्छ और स्वस्थ रखे बिना स्वच्छ और स्वस्थ जीवन की आशा करना बेकार है।

सोनालि राउत, +3 द्वितीय वर्ष

जिंदगी का प्रवाह

एक मंदिर में एक साधु थे। वे कभी भी किसी व्यक्ति पर क्रोधित नहीं होते थे। इसीलिए वे प्रसिद्ध थे। एक बार एक राजा ने साधु की परीक्षा लेने को चाहा। एक दिन राजा उस मंदिर को गए। ठीक उसी समय पर साधु नदी से एक पात्र में पानी ले कर मंदिर के प्रांगण को साफ कर रहे थे। राजा ने अपने एक सैनिक को पास बुलाकर बोले कि- "तुम जा कर उस मंदिर के प्रांगण को मिट्टी से मैला करो, जब साधु फिर से उसे साफ करेंगे, तो तुम फिर से वैसा ही करना ऐसे दो-तीन बार होने से साधु क्रोधित हो जाएंगे। "उस सैनिक ने राजा के आदेश का पालन किया। राजा ने जैसा बोला थे वे वैसा ही किया। साधु ने उस सैनिक से कुछ न कहते हुए अपना काम करने लगे। कुछ समय तक ऐसे ही चलता रहा। साधु बीच-बीच में मुस्कुरा रहे थे। अंत में सैनिक थक गया। परंतु साधु के हुदय में जरा सा भी क्रोध नहीं था। राजा यह दृश्य देखकर विस्मित हो गए। फिर राजा ने उस साधु के पास जा कर प्रणाम करके पूछा कि - "हे महात्मा! यह कैसे संभव है?" साधु ने कहा कि - "प्रथमतः उस सैनिक के अर्थहीन आचरण से मैं समझ गया था कि वह मेरी सहनशीलता को तोड़ने का प्रयास कर रहा है। द्वितीयतः यह कि नदी मेरी गुरु है। मैं उनसे इतना सीख पाया हूं कि 'कभी रुकना मत'। मैं जितनी बार भी नदी से पानी लेने जाता हूँ, वह मुझसे पूछती नहीं कि, क्यों पानी लेते हो। वह कभी भी रुकती नहीं है ना ही किसीसे कुछ कहती नहीं है। ऐसा ही मेरा जीवन है।

वैसे ही इस प्रांगण को साफ करना मेरे लिए कोई बड़ा काम नहीं है, यह एक प्रवाहमान धारा है। जितनीं ही बार ये मैला होगा उतनी ही बार मैं इसे साफ करूँगा। यह तुम्हारे दृष्टि में एक बड़ी बात है ,पर मेरी दृष्टि में नहीं। मेरे पास स्वार्थ, लोभ आदि का प्रश्न नहीं है। इसीलिए मेरे मन में निराशा, क्रोध, अभिमान नहीं है। जीवन को समझो, जिंदगी के लक्ष्य ओर जीवन के प्रभाव को जान लेना जरूरी है । यही एक साधु का कर्तव्य है।"

श्रद्धांजलि भउल

+3 प्रथम वर्ष

ज़िन्दगी

गर्भ की परतों को
धरती के सीने की तरह चीर कर
अंकुर सी फूटी हूँ मैं
सिर्फ तुम्हारे लिए

नन्ही चोंच में
आशा के दाने चुगती रही
बचपन की गुल्लक में
एक एक कर
तुम्हे चुनती रही

न जाने हँसी खुशी उदासी के
कितने तुम्हारे रंगों से
हर बार होली खेली
तुम्हारी तरंगों के साथ
न जाने कितनी बार
उछली डूबी और बही हूँ
कभी स्वेच्छा से
कभी निरुपाय

कभी रूठना मनाना
कभी हँसना हँसाना
कभी तू तू मैं मैं
कभी हारना हराना
कई बार सोचा कि अब बस
तुम्हें छोड़ दूं, मुक्त हो जाऊं
पर न तुम छूटे, न मैंने छोड़ा

सोचा सबसे तुमको छुपा कर रखूं
पर टुकड़ों में तुम सामने आते रहे
आनंद, पीड़ा, ईर्ष्या, अचरज
का कारण बनते रहे

तुम मेरा प्यार हो
मेरी ज़िंदगी

--- **डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी**

भगवान के डाकिए

पक्षी और बादल,
ये भगवान के डाकिए हैं,
जो एक महादेश से
दूसरे महादेश को जाते हैं।
हम तो समझ नहीं पाते हैं
मगर उनकी लाई चिट्ठियाँ
पेड़, पौधे, पानी और पहाड़
बाँचते हैं।
हम तो केवल यह आँकते हैं
कि एक देश की धरती
दूसरे देश को सुगंध भेजती है।
और वह सौरभ हवा में तैरते हुए
पक्षियों की पाँखों पर तिरता है।
और एक देश का भाप
दूसरे देश में पानी
बनकर गिरता है।

[संगृहित]
-दीपिका पात्र
-बारहवीं
-(विज्ञान)

चिट्ठियाँ

लेटरबक्स में पड़ी हुई चिट्ठियाँ
अनंत सुख-दुख वाली अनंत चिट्ठियाँ
लेकिन कोई किसी से नहीं बोलती
सभी अकेले - अकेले
अपनी मंज़िल पर पहुँचने का इंतजार करती हैं।
कैसा है यह एक साथ होना
दूसरे के साथ हँसना न रोना
क्या हम भी
लेटरबक्स की चिट्ठियाँ हो गए हैं।

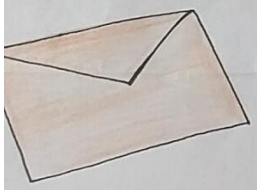

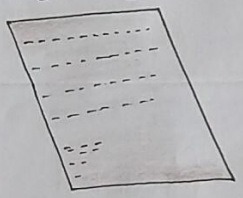

-दीपिका पात्र
-बारहवीं
-(विज्ञान)

हम पृथ्वी की संतान!

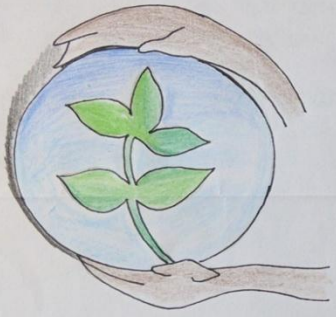

-दीपिका पात्र
-बारहवीं
-(विज्ञान)

पिता के बाद

लड़कियाँ खिलखिलाती हैं तेज़ धूप में,
लड़कियाँ खिलखिलाती हैं तेज़ बारिश में,
लड़कियाँ हँसती हैं हर मौसम में।
लड़कियाँ पिता के बाद सँभालती हैं
पिता के पिता से मिली दुकान,
लड़कियाँ वारिस हैं पिता की।
लड़कियों ने समेट लिया
माँ को पिता के बाद,
लड़कियाँ होती हैं माँ।
दुकान पर बैठ लड़कियाँ
सुनती हैं पूर्वजों की प्रतिध्वनियाँ,
उदास गीतों में वे ढूँढ लेती हैं जीवन राग,
धूप में, बारिश में,
हर मौसम में खिलखिलाती हैं लड़कियाँ।

[संगृहित]
-दीपिका पात्र
-बारहवीं
-(विज्ञान)

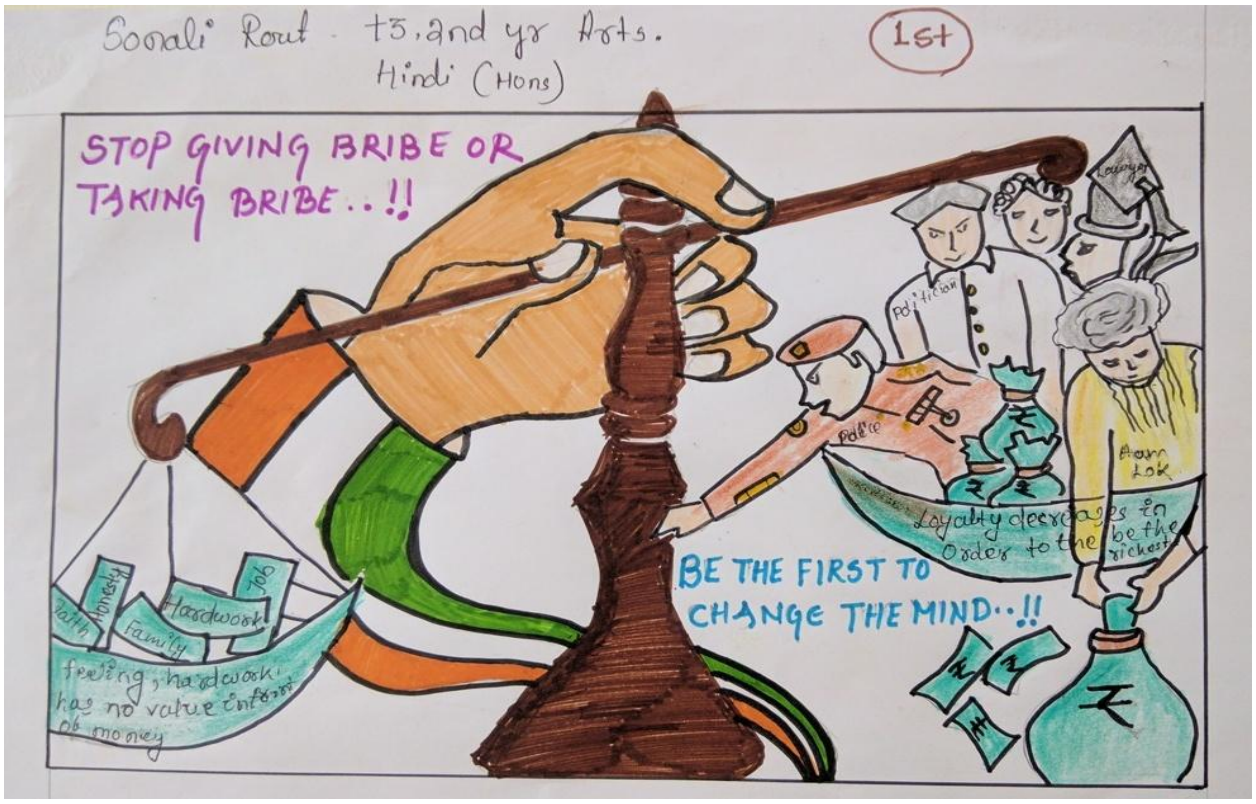

Sonali Rout +3, 2nd yr Arts.
Hindi (Hons)
1st
STOP GIVING BRIBE OR TAKING BRIBE..!!
Politician
Police
Aam Lok
Loyalty decreases in Order to be the richest
BE THE FIRST TO CHANGE THE MIND..!!
Faith
Honesty
Family
Hardwork
Job
feeling, hardwork has no value in form of money

MY VISION- CORRUPTION FREE INDIA
Manisha Sahoo
2nd
THE CHANGE STARTS IN OUR MIND.
MANISHA SAHOO +3 1st yr (ARTS)

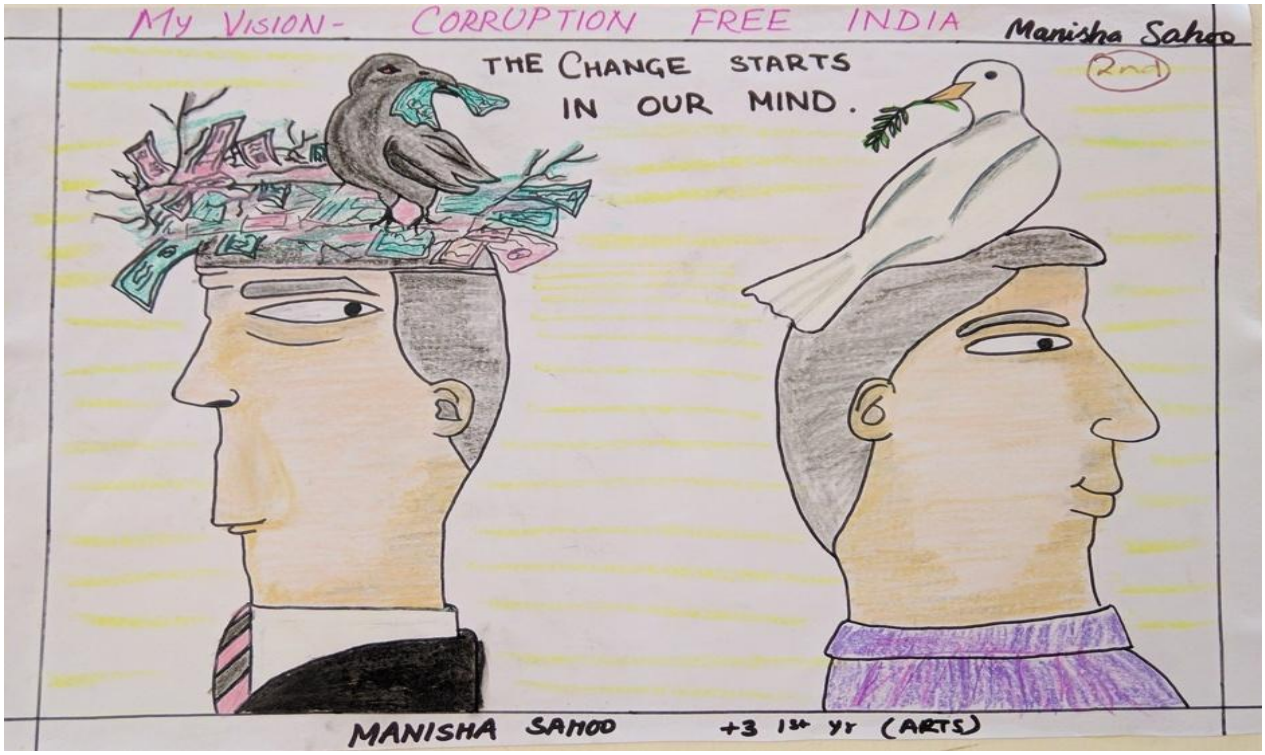

शैक्षणिक उपलब्धियाँ

लिजा मिश्र, +3 द्वितीय वर्ष, विभागीय मिड सेमिस्टर परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया

शुभश्री शताब्दी दास, +3 प्रथम वर्ष, विभागीय मिड सेमिस्टर परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया

नीलिमा साहू, +2 द्वितीय वर्ष, वाणिज्य, (MILहिंदी) महाविद्यालय की टेस्टपरीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया

यादों के गलियारों से

धन्यवाद